अज्ञेय

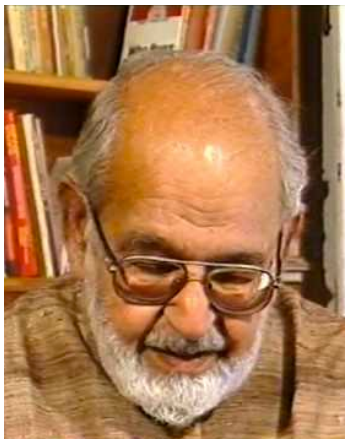

नाच

एक तनी हुई रस्सी है जिस पर मैं नाचता हूँ ।
जिस तनी हुई रस्सी पर मैं नाचता हूँ
वह दो खम्भों के बीच है ।
रस्सी पर मैं जो नाचता हूँ
वह एक खम्भे से दूसरे खम्भे तक का नाच है ।
दो खम्भों के बीच जिस तनी हुई रस्सी पर मैं नाचता हूँ
उस पर तीखी रोशनी पड़ती है
जिस में लोग मेरा नाच देखते हैं ।
न मुझे देखते हैं जो नाचता है
न रस्सी को जिस पर मैं नाचता हूँ
न खम्भों को जिस पर रस्सी तनी है
न रोशनी को ही जिस में नाच दीखता है :
लोग सिर्फ़ नाच देखते हैं ।
पर मैं जो नाचता हूँ
जो जिस रस्सी पर नाचता हूँ
जो जिन खम्भों के बीच है
जिस पर जो रोशनी पड़ती है
उस रोशनी में उन खम्भों के बीच उस रस्सी पर
असल में मैं नाचता नहीं हूँ ।

मैं केवल उस खम्भे से इस खम्भे तक दौड़ता हूँ
कि इस या उस खम्भे से रस्सी खोल दूँ
कि तनाव चुके और ढील में मुझे छुट्टी हो जाये –
पर तनाव ढीलता नहीं
और मैं इस खम्भे से उस खम्भे तक दौड़ता हूँ
पत तनाव वैसा ही बना रहता है
सब कुछ वैसा ही बना रहता है ।
और वही मेरा नाच है जिसे सब देखते हैं
मुझे नहीं
रस्सी को नहीं
खम्भे नहीं
रोशनी नहीं
तनाव भी नहीं
देखते हैं – नाच !

If you are wondering why this small collection of poetry includes not just one but *two* by Agyeya, count again: actually it includes five. This rightly famous poem, written in 1976, is from the second volume of सदानीरा (1986).